सुरभिसमग्र

वर्ष - २८, अंक - १ मूल्य : १७.०० रूपये जून, २०१९

वर्तमान शिक्षा पद्धति : भाग-०४

-डॉ० भरत राज सिंह
महानिदेशक-तकनीकी,
स्कूल आफ मैनेजमेंट साइंसेज, लखनऊ

वर्तमान शिक्षा में गुरु या अध्यापक श्रद्धा का पात्र न होकर वेतन भोगी नौकर बन गया। अध्यापक की भूमिका गौण हो गई तथा विद्यालय-विश्वविद्यालय के प्रबन्ध तन्त्र की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। वर्तमान शिक्षा का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। प्रायः लोग इसे मैकाले की शिक्षा प्रणाली के नाम से पुकारते हैं। लार्ड मैकाले ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के ऊपरी सदन (हाउस आफ लार्ड्स) का सदस्य था। ४८५७ का क्रान्ति के बाद जब १८६० में भारत के शासन को ईस्ट इण्डिया कम्पनी से छीनकर महारानी विक्टोरिया के अधीन किया गया तब मैकाले को भारत में अंग्रेजों के शासन को मजबूत बनाने के लिये आवश्यक नीतियां सुझाने का महत्वपूर्ण कार्य सपा गया था। उसने सारे देश का भ्रमण किया। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यहां झाड़ू देने बाजी, चमड़ा उतारने वाला, करधा चलाने वाला, कृषक, व्यापारी (वैश्य), मंत्र पढ़ने वाला आदि सभी वर्ण के जोग अपने-अपने कर्म को बड़ी श्रद्धा से हंसते-गाते कर रहे थे। सारा समाज संबंधों की डोर से बंधा हुआ था। शूद्र भी समाज में किसी का भाई, चाचा या दादा था तथा ब्राह्मण भी ऐसे ही रिश्तों से बंधा था। बेटी गांव की हुआ करती थी तथा दामाद, मामा आदि रिश्ते गांव के हुआ करते थे। इस प्रकार भारतीय समाज भिन्नता के बीच भी एकता के सूत्र में बंधा हुआ था। इस समय धार्मिक सम्प्रदायों के बीच भी सौहार्दपूर्ण संबंध था। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि १८५७ की क्रान्ति में हिन्दू-मुसलमान दोनों ने मिलकर अंग्रेजों का विरोध किया था। मैकाले को लगा कि जब तक हिन्दू-मुसलमानों के बीच वैमनस्य नहीं होगा तथा वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत संचालित समाज की एकता नहीं टूटेगी तब तक भारत पर अंग्रेजों का शासन मजबूत नहीं होगा।

भारतीय समाज की एकता को नष्ट करने तथा वर्णाश्रित कर्म के प्रति घृणा उत्पन्न करने के लिए मैकाले ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली को बनाया। अंग्रेजों की इस शिक्षा नीति का लक्ष्य था संस्कृत, फारसी तथा लोक भाषाओं के वर्चस्व को तोड़कर अंग्रेजी का वर्चस्व कायम करना। साथ ही सरकार चलाने के लिए देशी अंग्रेजों को तैयार करना। इस प्रणाली के जरिए वंशानुगत कर्म के प्रति घृणा पैदा करने और परस्पर द्विवेष फैलाने की भी कोशिश की गई थी। इसके अलावा पश्चिमी सभ्यता एवं जीवन पद्धति के प्रति आकर्षण पैदा करना भी मैकाले का लक्ष्य था। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में ईसाई मिशनरियों ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ईसाई मिशनरियों ने ही सर्वप्रथम मैकाले की शिक्षा-नीति को लागू किया । आज स्वतन्त्रता के ७२ वर्ष बाद यह स्पष्ट है कि मैकाले की शिक्षा नीति अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में पूर्णतया सफल हो चुकी है । इसका प्रमाण है कि देश के एक प्रतिष्ठित प्रदेश का राज्यपाल संस्कृत के मंच से संस्कृत का अपमान करने का साहस जुटा सका। यह हमारे समाज के अभिजात्य वर्ग की मानसिक गुलामी का प्रतीक है। आईएएस, आईपीएस आदि के माध्यम से आज भी देशी अंग्रेज तैयार किए जा रहे हैं वंशानुगत कर्म के प्रति सभी वर्ण हीन भावना एवं घृणा के शिकार हो चुके हैं। पश्चिमी सभ्यता एवं जीवन पद्धति के प्रति आकर्षण अपने चरम पर है। वर्तमान शिक्षा में गुरु या अध्यापक श्रद्धा का पात्र न होकर वेतन भोगी नौकर बन गया। अध्यापक की भूमिका गौण हो गई तथा विद्यालय-विश्वविद्यालय के प्रबन्ध तन्त्र की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। शिक्षा में मानव को योग्य एवं चरित्रवान बनाने का वास्तविक लक्ष्य छूट गया तथा डिग्री-सर्टिफिकेट का महत्व बढ़ गया। पेशेगत योग्यता की शिक्षा महंगी हो गई। इसने एक उद्योग (व्यापार) का रूप ग्रहण कर लिया। सेवा भाव का लोप हुआ तथा व्यापारिक मनोवृत्ति हावी हो गई।

कर्म के प्रति श्रद्धा

इसके समाप्त होने से शिक्षा मात्र आर्थोपार्जन का साधन बन गई है । इससे आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग बन्द हो गया। आहार-विहार में सन्तुलन न होने से शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य में कमी आई तथा आलस्य-प्रमाद के कारण श्रम शक्ति का ह्रास हुआ। इस प्रकार वर्तमान शिक्षा से सामाजिक दायित्व एवं राष्ट्रीय कर्तव्य का ज्ञान न मिलने से विद्यार्थी स्वयं एवं परिवार केन्द्रित होकर अधिक से अधिक अर्थोपार्जन में लगे हैं। वे अधिक से अधिक भौतिक सुख-साधनों के संग्रह-उपभोग को ही जीवन का लक्ष्य समझ बैठे हैं।

येन-केन-प्रकारेण अर्थोपार्जन के लक्ष्य ने कर्म के अनुष्ठान में नैतिक मानदण्डों को नष्ट किया है। भौतिक सुखों को भोगने की सीमा टूटने से अनेक प्रकार की शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक समस्याएं उत्पन्न हुईं। अपनी भाषा, संस्कृति तथा राष्ट्र के प्रति गौरव-स्वाभिमान की भावना नष्ट हुई तथा परकीय भाषा, संस्कृति तथा पर-देश के प्रति आदर एवं आकर्षण बढ़ा। कहना न होगा कि वर्तमान शिक्षा विद्यार्थी को शरीर, मन एवं बुद्धि से रुग्ण बनाकर कुसंस्कृत तथा पतनोन्मुख बना रही है। राजनीतिक संघर्ष से भले ही देश को शारीरिक स्वतन्त्रता मिली पर विगत साठ वर्षों में मानसिक-बौद्धिक परतन्त्रता की बेड़ियां मजबूत हुईं हैं।

वर्तमान शिक्षा की विफलता

विगत दो दशकों से वर्तमान शिक्षा की विफलता को स्वीकार कर इसमें आमूत्र परिवर्तन की आवश्यकता की बात को अनेक विद्वानों, विचारकों एवं राजनेताओं ने उठाया है। चूंकि अब तक कोई विचारणीय, अनुकरणीय तथा स्वीकार्य विकल्प प्रस्तुत न हो सका इसलिए वर्तमान शिक्षा को अपनाना लोगों की मजबूरी है। विकल्प के अन्तर्गत दो प्रश्न उठते हैं। पहला यह कि वर्तमान सन्दर्भों में एक सम्यक भारतीय शिक्षा का स्वरूप क्या हो? इसके अलावा वर्तमान शिक्षा में भारतीय परिवेश के अनुसार क्या परिवर्तन हो? आज जरूरत वर्तमान शिक्षा को स्वदेशी, सार्थक और मूल्य आधारित बनाने की है। इसके लिए भारतीय पद्धति से आधुनिक विषयों की शिक्षा दी जानी चाहिए। साथ ही गुरु एवं शिष्य के बीच भावनात्मक आत्मीय सम्बन्धों के निर्माण पर जोर दिए जाने की जरूरत है। गुरु के महत्व को बढ़ाकर प्रबन्ध तन्त्र के वर्चस्व को घटाना भी आवश्यक है। उच्च-शिक्षा को सर्व सुलभ बनाने के लिए आर्थिक दबाव को तो कम करना ही होगा । इसके अलावा चरित्र निर्माण के लिए विशेष पाठ्यक्रम एवं प्रयास की आवश्यकता है । शिक्षा के दो प्रमुख आयाम हैं : विधि और विषय ।

शिक्षा की गुणवत्ता

इस आधुनिक युग में भी शिक्षा की गुणवत्ता के लिये 'गुरुकुल पद्धति' को याद किया जाता है। इस पद्धति में अध्यापक शिक्षा के केन्द्र में तथा विद्यार्थी परिधि पर अवस्थित रहा है। प्रत्येक विषय के अध्यापक अपने-अपने कक्ष में स्थिर रहते थे तथा हर स्तर के विद्यार्थी निर्धारित समयानुसार आकर शिक्षा ग्रहण करते थे। इस पद्धति में अध्यापक-विद्यार्थी के बीच आत्मीय एवं भावनात्मक सम्बन्ध बनता है तथा अध्यापक पर विद्यार्थी को अपने विषय की योग्यता प्रदान करने का दायित्व रहता है। वर्तमान शिक्षा में अध्यापक विद्यार्थी को योग्य बनाने के दायित्व से रहित है। इसलिये शिक्षा के यान्त्रिक हो जाने से डॉक्टर, इंजीनीयर जैसे कल-पुर्जों का निर्माण तो हो रहा है लेकिन मानव का निर्माण बाधित हो गया है। शिक्षा को स्वदेशी, भावनात्मक तथा सार्थक बनाने के लिए सबसे पहले कक्षाओं का निर्माण विषयवार हो और विषय के अनुसार कक्षाओं को सजाया जाए। प्रवेश में अध्यापक की भूमिका निर्णायक हो। प्रबन्ध तन्त्र का वर्चस्व कम हो। अध्यापकों पर विद्यार्थी को योग्य बनाने का भार हो। अध्यापकों के प्रशिक्षण एवं चयन में उनके गुण, शील, चरित्र तथा शिक्षण कार्य के प्रति उनके समर्पण भाव का आकलन हो। जल, जमीन, जंगल एवं जानवरों के महत्व का ज्ञान कराने वाले पाठ्यक्रम का निर्माण हो। मानवीय चरित्र निर्माण के लिए आवश्यक पाठ्यक्रम का विकास हो। साथ हो अपने राष्ट्र, संस्कृति, भाषा-भूषा, आहार-व्यवहार के प्रति स्वाभिमान एवं गौरव के भाव का विकास हो। इसके अलावा प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर किताबों का बोझ कम हो और डिग्री-सार्टिफिकेट से अधिक योग्यता के विकास को महत्व दिया जाए।

परीक्षाओं का संचालन एवं नियंत्रण इस प्रकार हो कि विद्यार्थी निर्भय होकर उत्साह से परीक्षा में बैठें । निजी शिक्षण संस्थाओं द्वारा किए जा रहे आर्थिक शोषण पर तो अंकुश लगना ही चाहिए। शिक्षण संस्थानों में प्रवेश एवं नियुक्तियों के संदर्भ में राजनीतिक हस्तक्षेप समाप्त होना चाहिए। महाविद्यालयों-विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को सक्रिय राजनीति में भाग लेने पर रोक लगे। क्योंकि इससे दोनों स्तर पर एकता एवं सद्भाव का विघटन होता है तथा दोनों विभिन्न राजनीतिक गुटों में बंटकर शैक्षणिक परिसर को राजनीति का अखाड़ा बना देते हैं, जिससे विद्यार्थियों का शैक्षणिक विकास बाधित होता है। विद्यार्थी संघ का चुनाव तो हो लेकिन उसमें राजनीतिक गुटबाजी का प्रवेश निषेध हो। विद्यार्थी संघ का मुख्य कार्य इनके समस्याओं का समाधान एवं कल्याण हो। किसी भी राजनीतिक दल या नेताओं को उच्च शिक्षण संस्थानों में अपनी विचारधारा के प्रचार की अनुमति न हो। सभी जातियों एवं सम्प्रदायों के विद्यार्थियों को सभी स्तर पर शिक्षा का समान अधिकार एवं अवसर प्राप्त हो। वर्तमान शिक्षा में यदि ये परिवर्तन किए जा सकें तो संभव है विद्यार्थियों के भटकाव पर काफी हद तक लगाम लग जाए। ये बदलाव छात्रों में योग्यता का विकास करने में भी सहायक सिद्ध होंगे। इसके परिणामस्वरूप उत्पादक

प्रतिभा एवं मानवीय चरित्र से युक्त युवा उत्तम नागरिक बनकर परिवार को सुख, समाज को समृद्धि एवं राष्ट्र को शान्ति प्रदान कर सकेंगे।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में कोचिंग सेंटरों का प्रभाव

शहरों की प्रत्येक गली और चौराहों पर आज कोचिंग सेंटरों के बैनर लगे हुए हैं। जो आम आदमी का ध्यान अपनी ओर खींच कर उन्हें अपने बच्चों को कोचिंग सेंटर में भेजने के लिए विवश कर देते हैं। कोचिंग कक्षाओं का जितना बड़ा नाम, उतना ही ज्यादा पैसा। इतना ही नहीं वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर एक बड़ा प्रश्न चिन्ह भी लगाता है कि बच्चे स्कूल में शिक्षा ग्रहण करें या ना करें ? लेकिन उसे किसी भी नौकरी के लिखित और मौखिक परीक्षा के लिए कोचिंग लिए आवश्यक है। क्या हम यह माने कि स्कूलों और कॉलेजों में दी जाने वाली शिक्षा गुणवत्ता एवं सफलता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती? फिर सरकार को शिक्षा व्यवस्था में इतना पैसा लगाने की आवश्यकता ही कहां है? ऐसी परिस्थितियों में और सफलता कोचिंग कक्षा से ही मिल सकती है, तो क्यों माता-पिता अपने बच्चों को कितने ही वर्ष स्कूल में भेजकर उनका समय बर्बाद करते हैं। आइए, यह जानने का प्रयास करें कि क्या फर्क है? स्कूली शिक्षा एवं कोचिंग कक्षाओं में। स्कूली शिक्षा में छात्र को एक निर्धारित पाठ्यक्रम एवं कालांशों के हिसाब से पढ़ाया जाता है । मनोवैज्ञानिकों की माने तो यही उनकी उम्र एवं चिंतन शक्ति को ध्यान में रखकर किया जाता है लेकिन कोचिंग कक्षाओं में इसका कतई ध्यान नहीं दिया जाता। इन केंद्रों पर शिक्षा का मूल भाव बच्चे द्वारा दी जाने वाली फीस के हिसाब से किया जाता है। आपकी जेब में अगर ज्यादा पैसा है तो एक वर्ष में करवाया जाने वाला पाठ्यक्रम मात्र एक महीने में ही करवाया जा सकता है। ज्यादातर शिक्षक स्वयं को स्कूलों एवं विश्वविद्यालयों के काबिल न मानकर उच्च श्रेणी अध्यापक मानते हैं और अपना कोचिंग सेंटर खोल देते हैं। वह समय-समय पर स्कूल बदल कर अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा लेते हैं और अपने नाम के साथ उन सभी शिक्षण संस्थानों के नाम जोड़ देते हैं जिससे आस-पास के सभी छात्र उन से परिचित हो जाते हैं। शिक्षण के नाम पर अपनी दुकान चलाने वाले यह अध्यापक कक्षा में इस बात पर जोर देते हैं कि वह पाठ्यक्रम को एक छोटी अवधि में सरलता से अपनी कोचिंग सेंटर पर पूरा करा सकते हैं । आज छात्रों और अभिभावकों में 'ए' ग्रेड लेने की होड़ हुई है । लेकिन परिणाम निकलेगा ? यह कोई नहीं सोचता। छात्रों को माता-पिता दिन की शुरुआत के साथ ही कोचिंग सेंटर छोड़ देते हैं । शाम को फिर से बच्चा उसी कोचिंग पहुंच जाता है। जो समय बच्चों की खेलकूद, विश्राम, गृह कार्य करने का था, अब वह कोचिंग सेंटर में ही निकल जाता है। सीधा सा अर्थ है - जब उसे कोचिंग कक्षा में आसानी से गृह कार्य करवाया जाएगा तो वह अपना दिमाग क्यों खर्च करेगा? आज पैसों के बल पर आप किसी ही स्तर की शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। फिर चाहे वह बड़े अधिकारी के पद की ही क्यों ना हो। वर्तमान में अधिकतर स्कूलों ने इस व्यवस्था का सहारा लेकर अलग से कोचिंग देने की व्यवस्थाएं भी प्रारंभ कर दी है। कहने को तो छात्र स्कूली शिक्षा ग्रहण कर रहा है लेकिन वास्तविक रूप से उसे कोचिंग का अभ्यस्त कर दिया गया है। अगर यही बात है तो क्यों नहीं स्कूलों को कोचिंग सेंटर में ही तब्दील कर दिया जाए? उनकी मान्यता पर भी एक बड़ा प्रश्न चिन्ह लगता है। सरकार में बैठे बड़े-बड़े पदाधिकारियों को इस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। आज स्कूल मात्र कोचिंग सेंटर बनकर रह गये हैं। आज सभी जागरुक नागरिकों को अपने बच्चों को ऐसे शिक्षण संस्थानों से बताना चाहिए जो शिक्षा का मंदिर ना होकर मात्र एक पैसे कमाने की दुकान रहे गए हैं। वर्तमान में बच्चों के नैतिक मूल्यों की गिरावट का भी यह एक मुख्य कारण है। जब एक बच्चा मोटी फीस देकर शिक्षा ग्रहण करता है तो वह गुरु और शिष्य के संस्कार परंपरा और मूल्यों को पूरी तरह से नकार देते हैं। सवाल यह उठता है यदि कोचिंग संस्थान बेहतर शिक्षा दे रहे हैं, तो-

- क्या सरकारी संस्थानों के अध्यापकों पर ही कोचिंग नहीं देने का दबाव बनाकर सरकार इन संस्थानों को खुलेआम प्रोत्साहन दे रही है ?
- क्या इन कोचिंग कक्षाएं देने वाले अध्यापकों पर कोई भी नियम लागू नहीं होते? सुनने में तो यहां तक आता है कि प्रत्येक कोचिंग संस्थान अपने नियम बनाकर सरकार की कमजोरियों को आइना दिखा रहे हैं।
- क्या स्कूल कालेज एवं महाविद्यालय को मात्र एक डिग्री सर्टिफिकेट लेने का संस्थान ही कहा जाए।

आइए, इस पर एक कदम बढ़ाकर वर्तमान शिक्षा प्रणाली में सुधार कर बच्चों का कोचिंग का प्रति रुक्षान के विषय में सोचे। एक छोटी सी पहल के माध्यम से मैं समाज एवं सरकार के रवैये में बदलाव की उपेक्षा कर रहा हूं कि स्कूली शिक्षा व्यवस्था पर जोर देते हुए छात्रों एक गुणवत्तापरक शिक्षा प्रदान करें । जिससे माता-पिता बच्चों की शिक्षा में होने वाले मोटे खर्च से बच सके।